'अप्प दीपो भव'

वॉयस ऑफ बुद्धा

Postal Reg. No.-DL(ND)-11/6144/2016-18
WPP Licence No.- U(C)-101/2017-18
R.N.I. No. 68180/98

Date of Publication : 31.05.2018
Date of Posting on concessional rate :
2-3 & 16-17 of each fortnight

मूल्य : पाँच रूपये

प्रेषक : डॉ0 उदित राज (राम राज) चेयरमैन – जस्टिस पब्लिकेशंस, टी–22, अतुल ग्रोव रोड, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली–110001, फोन : 23354841–42

Website : www.uditraj.com E-mail: parisangh1997@gmail.com

● वर्ष : 21 ● अंक 13 ● पाक्षिक ● द्विभाषी ● कुल पृष्ठ संख्या 8 ● 16 से 31 मई, 2018

सत्ता की आस में लुटे दलित

बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर ने सत्ता को वह कुंजी बताई थी जिससे सारे ताले खुल जाते हैं। उस समय की परिस्थितियों के अनुसार काफी हद तक सत्ता सभी क्षेत्रों को नियंत्रित करती थी, लेकिन अब वह नहीं रहा। वोल्सेविक क्रांति के बाद दुनिया के तमाम देश कम्युनिस्ट होते जा रहे थे और जहां राजसत्ता सबकुछ नियंत्रित रखती थी। यूरोपीय देशों में भी राजसत्ता काफी प्रभाशाली रही। कांशीराम जी ने जब बहुजन समाज पार्टी बनाई तो लक्ष्य सत्ता प्राप्ति का रखा जिसको हासिल करना आसान नहीं था। धारणा यह बनायी कि सत्ता हासिल करो, सबकुछ हो जाएगा और रोजमर्रा के संघर्ष से अधिकार और सम्मान लेने की चिंता छोड़ो। यदि किसी दूसरे ने सामाजिक–राजनैतिक कार्य करने की कोशिश की तो उसे बदनाम कर दिया कि बसपा को सत्ता में आने से रोकने का षड्यंत्र है। निजीकरण, ठेकेदारी, आउटसोर्सिंग, अत्याचार, शिक्षा, स्वास्थ्य, महंगाई, न्यायपालिका द्वारा संवैधानिक अधिकार का अधिग्रहण आदि की बात करने वाला अम्बेडकरवाद और बसपा विरोधी माना जाने लगा।

बसपा का प्रभाव 1990 के दशक में शुरू होता है और वही समय था जब निजीकरण की शुरुआत हुई, पी.वी. नरसिंहा राव की पहली सरकार थी जिसने निजीकरण की शुरुआत की और धीरे–धीरे गति तेज हो गयी। ठेकेदारी प्रथा और आउटसोर्सिंग जैसे तरीके अपनाकर सरकारी नौकरियाँ खत्म की जाती रही। मंडल कमीशन लागू होने के बाद एक मुहीम चल गयी कि सरकारी विभाग निकम्मे और भ्रष्ट हो गए हैं इसलिए समस्याओं का समाधान निजीकरण है। 1993 में कोलोजियम सिस्टम के द्वारा उच्च न्यायपालिका में जजों की नियुक्ति होने लगी जिससे परिवारवाद, जातिवाद और निकम्मावाद बढ़ा। अभिजात्य वर्ग ने इस असंवैधानिक कार्य के खिलाफ कुछ नहीं किया क्योंकि यह उनके हित में था। संविधान में कहीं भी प्रावधान नहीं है कि जज ही जज को बनायेंगे। राजनैतिक दल गरीब, दलित, आदिवासी और पिछड़ा के खिलाफ नीति–योजना स्वयं तो विरोध में बना नहीं सकते तो यह कार्य न्यायपालिका से करवाने लगे। सुप्रीम कोर्ट द्वारा दिए गए मंडल जजमेंट में अनुसूचित जाति का आरक्षण विषय नहीं था फिर भी जजों ने अपनी राय रखी, जिससे पांच आरक्षण विरोधी आदेश 1997 में जारी हुए। मेरे नेतृत्व में अनुसूचित जाति/जनजति संगठनों का अखिल भारतीय परिसंघ ने संघर्ष किया और वाजपेई जी की सरकार ने तीन संवैधानिक संशोधन करके इसे ठीक किया। सत्ता का धुन इतना सवार हुआ कि 2007 में सुश्री मायावती मुख्यमंत्री बनी तब दलित ऐक्ट में बड़ा संशोधन किया गया कि इस कानून का प्रयोग हत्या और बलात्कार में ही होगा, तब परिसंघ ने इलाहबाद हाई कोर्ट में याचिका दायर कर उस निर्देश को निरस्त कराया। पदोन्नति में आरक्षण का मुकदमा परिसंघ की पैरवी से 2006 में सुप्रीम कोर्ट में जीता और सुश्री मायावती मुख्यमंत्री थीं तो 4 जनवरी 2011 को लखनऊ हाई कोर्ट में पदोन्नति में आरक्षण इसलिए खत्म कर देती हैं कि उसकी पैरवी ठीक से नहीं हुई। स्पेशल कंपोनेंट प्लान, ट्राइबल सब प्लान कभी ईमानदारी से लागू नहीं किया गया इस पर कभी कोई आवाज इनकी तरफ से नहीं उठी। आरक्षण आदेशों से लागू होता रहा है जबकि इसे कानून की शक्ल में बदल देना चाहिए था, लाखों पद केंद्र सरकार से लेकर राज्य सरकार में लगातार खाली रहे हैं। उच्च न्यायपालिका में दलितों और पिछड़ों की भागीदारी नहीं के बराबर रही।

सत्ता के सपने में दलित उपरोक्त भयंकर नुकसान पर ध्यान नहीं दिए और बस एक ही धुन में लगे रहे कि सत्ता आयेगी तो सब ठीक हो जायेगा। नेतृत्व ने सोचने ही नहीं दिया कि अधिकार एक दिन में नहीं मिलते और ये रोजमर्रा के हिसाब से मिलते और छिनते हैं। अगर इस सोच के आधार पर चले होते तो उपरोक्त समस्याओं को लेकर संसद से सड़क तक जैसे अन्य पार्टियाँ अपने मुद्दे पर लड़ती हैं, ये भी लड़े होते। कितनी बड़ी त्रासदी है कि जब दलित हित की पार्टी बनी तो अधिकार छिनते गए और पार्टी बूथ स्तर पर सक्रिय होकर सांसद–विधायक बनाने में ही मस्त रहती है। इये सोच का आभाव कहें या स्वार्थ। समयांतराल राजसत्ता कमजोर हो गयी है, कुछ ताक़त मीडिया के पास तो कुछ न्यायपालिका और कॉर्पोरेट जगत के पास। सुप्रीम कोर्ट के दो जज का फैसला देश का कानून बन जाता है जबकि संसद से कानून बनाना आसान नहीं है।

दलितों को यह समझ लेना चाहिए कि जाति व्यवस्था खत्म होने वाली नहीं है। ब्राह्मण स्वाभाविक रूप से क्षत्रिय, वैश्य, पिछड़ा एवं दलित का नेतृत्व नहीं स्वीकार कर सकता। क्षत्रिय अपने से नीचे वालों का और इस तरह से दलित सबसे नीचे पायदान पर होने की वजह से अन्य नेतृत्व स्वीकार नहीं करेंगें जब तक कि मजबूरी न हो। अगर ये चुनकर भी जाते हैं तो दलित उत्थान के लिए नहीं बल्कि सांसद या विधायक बनने के लिए। इन परिस्थितयों में क्या दलित सत्ता पर काबिज हो सकेगा। पिछड़ा वर्ग अभी न इधर का है और न उधर का। ऐसे में जब तक सत्ता नहीं मिलती तो क्या सबकुछ खो दिया जाये। जितनी ताक़त समाज ने बसपा को दिया अगर उसका एक चौथाई भी मुझे दिया होता तो अधिकार छीनने की बजाय और ज्यादा मिला होता। कम ताकत मिलने के बावजूद में भी मेरी उपलब्धियों की लम्बी सूची है। बाबा साहेब के हाथ में खुद सत्ता नहीं थी तब कैसे इतने अधिकार दिला सके? सत्ता की प्राप्ति की लड़ाई लड़ते रहना चाहिए लेकिन सड़क पर संघर्ष लगातार जारी रहे।

***

मुझे अपनी जाति की वजह से नौकरी छोड़नी पड़ी

बीबीसी हिंदी की #Being Muslim And Dalit सिरीज की इस कड़ी में पढ़िए एक दलित लड़की की कहानी। पूजा लखनऊ के रेनेंसा होटल में असिस्टेंट मैनेजर के तौर पर काम करती हैं।

एक पढ़ी-लिखी और अच्छी नौकरी करने वाली दलित लड़की के लिए भी जिंदगी आसान नहीं होती। पूजा को किन मुश्किलों का सामना करना पड़ता है, जानिए उनकी ही जुबानी।

मुझे स्कूल में पता चला कि मैं ''नीची जाति'' की हूं। शायद सातवीं या आठवीं क्लास में पढ़ती थी। कोई फॉर्म भरा जा रहा था, उसमें अपनी जाति लिखनी थी। बाकी बच्चों की तरह मैंने भी लिखी। सबकी नजर उस पर गई और अचानक सब कुछ बदल गया। मुझे ये बता दिया गया कि मैं ''नीची जाति'' की हूं और हरेक पल ये जताया भी जाने लगा। स्कूल में सबका बर्ताव मेरे साथ बदल गया। जो दोस्त दिनभर मेरे साथ खेलते-खाते थे वो मुझसे कटे-कटे रहने लगे। टीचरों की नजरें भी अजीब सी लगने लगीं। ''मेरे साथ ये क्यों हो रहा है?''

मैंने घर आकर पापा से पूछा कि मेरे साथ ये सब क्यों हो रहा है तो उन्होंने बताया कि हम दलित हैं और हमारे साथ हमेशा से ऐसा होता आया है। उस वक्त ज्यादा कुछ समझ नहीं आया लेकिन धीरे-धीरे सब आईने की तरह साफ हो गया। ऐसे आप बहुत अच्छे हैं, कोई कमी नहीं है आपमें। कास्ट पता चलते ही आप बुरे हो जाते

हैं। आप कामचोर हो जाते हैं, आपकी सारी ''मेरिट'' खत्म हो जाती है और आप आरक्षण का फायदा लेकर हर जगह घुसपैठ करने वाले बन जाते हैं। मैंने आज तक आरक्षण का कोई फायदा नहीं लिया। न नौकरी के लिए और न पढ़ाई के लिए। मैंने एमबीए किया और लखनऊ के रेनेंसा होटल में असिस्टेंट मैनेजर हूं।

''मैंने कभी आरक्षण नहीं लिया''

मैंने आरक्षण नहीं लिया क्योंकि मुझे इसकी जरूरत महसूस नहीं हुई, लेकिन दलितों के एक बड़े तबके को वाकई इसकी जरूरत है। उन्हें आरक्षण लेना भी चाहिए। ये उनका हक है। लोग आजकल आर्थिक आधार पर आरक्षण की वकालत करते हैं। मुझे इससे कोई दिक्कत नहीं है। आइडिया अच्छा है। लाइए आर्थिक आधार पर आरक्षण, लेकिन क्या आप गारंटी दे पाएंगे कि इसके बाद हमारे साथ जाति की वजह से भेदभाव नहीं होगा? हमारा उत्पीड़न बंद हो जाएगा? मैं तो फिर भी बहुत अच्छी हालत में हूं, आप गांवों में जाकर देखिए। ऊंची जाति के लोगों के कुएं से पानी लेने पर बवाल होता है, कई स्कूलों में बच्चों को अलग लाइन में बैठाया जाता है। खाना शेयर करना तो दूर, दूसरे बच्चे उनके साथ बैठकर खाना नहीं खा सकते।

क्या ये सब होना बंद हो जाएगा?

जाति पता चली और नौकरी छोड़नी पड़ी। मैंने अच्छी पढ़ाई की, जॉब भी कर रही हूं, लेकिन जाति का ये भूत मेरा पीछा ही नहीं छोड़ता। मैं जब दिल्ली में जॉब करती थी तो वहां कुछ दोस्तों से बातचीत में मेरी कास्ट का पता चल गया। अब क्या मुझे बताने की जरूरत है कि इसके बाद क्या हुआ होगा? हुआ ये कि मैं इतनी अलग-थलग पड़ गई कि मैंने वो नौकरी छोड़ने का फैसला किया। जो पहले दोस्त थे, वे तरह-तरह की टिप्पणी करने लगे। लोगों ने बातचीत बंद कर दी। न छोड़ती तो डिप्रेशन में आ जाती। इसके बाद मैंने तय किया कि चाहे जो हो जाए अपनी जाति का पता नहीं चलने दूंगी। मैं मजबूर थी। अभी जहां काम करती हूं वहां भी अब तक अपनी कास्ट नहीं बताई है। मुझे पता है कि मेरी जाति पता चलेगी तो मेरा सर्वाइव करना मुश्किल हो जाएगा।

''हां, मैं दलित हूं''

लेकिन अब मैं खुलकर दुनिया के सामने आना चाहती हूं। हां, मैं दलित हूं। मैंने कोई गलत काम नहीं किया। हमसे गुनाहगारों सा बर्ताव करना बंद करिए। मैंने उत्तर प्रदेश में तीन सरकारें बनती देखीं, लेकिन हालात बदलते नहीं देखा। मायावती खुद को ''दलित की बेटी'' कहती जरूर हैं, लेकिन उनके कामों में मुझे ऐसा कुछ तो नहीं लगा कि वो दलितों की भलाई करना चाहती हैं।

''हिंदू धर्म नहीं छोड़ूंगी''

ये सच है कि हिंदू धर्म में सबसे ज्यादा जातिवाद है, लेकिन मेरे मन में कभी धर्म बदलने का ख़्याल नहीं आया और न ही कभी मैंने भगवान पर भरोसा करना छोड़ा। मुझे लगता है कि ये शुतुरमुर्ग जैसा होगा जो खतरा भांपने पर पत्थर में अपना सिर छिपा लेता है और सोचता है खतरा टल गया। शायद ये हालात से भागने जैसा होगा। मैं आसान रास्ते से भागने के बजाय डटकर इन हालात का सामना करना चाहती हूं। अगर मुझे दूसरी जाति के किसी लड़के से प्यार हुआ तो मैं उससे शादी भी करना चाहूंगी। मेरे भाई ने राजपूत लड़की से शादी की है। हां, ये बात और है कि भाभी के परिवार वाले अब भी इस रिश्ते को कबूल नहीं पाए हैं।

दलित और औरत होना...

होटल में मेरे अंडर में एक टीम काम करती है। औरत होने के साथ-साथ दलित होना अपने आप में एक बड़ी चुनौती है। लोग आपको नीचा दिखाने की कोशिशों में कोई कसर नहीं छोड़ते। वो गलतियां निकालने के मौके ढूंढते है, क्योंकि गलती मिलते ही कहेंगे, देखा ये लोग मेहनत तो करते ही नहीं! लोगों को लगता है दलित माने रिजर्वेशन। वो सोचते हैं कि हमें बस आरक्षण लेना आता है और कुछ नहीं।

https://www.bbc.com/hindi/india-44080431?ocid=socialflow_facebook

***

गुजरात : शादी के कार्ड पर नाम में सिंह जोड़ने पर दलित परिवार को धमकी

गुजरात के डीसा जिले में एक दलित परिवार को शादी के निमंत्रण कार्ड पर नाम के आगे सिंह लिखवाने को लेकर धमकियां मिल रही हैं। शादी के दिन कार्यक्रम में खलल डालने की परिवार को धमकी दी जा रही है। गुजरात में नाम के साथ सिंह उपनाम जोड़ने को सम्मान के प्रतीक के तौर पर देखा जाता है। राजपूत समुदाय में पुरुष आमतौर पर अपने नाम के साथ सिंह लगाते हैं। शिकायत मिलने के बाद फोन नंबर के आधार पर पुलिस धमकी देने वालों की पहचान करने में जुटी है। पुलिस का कहना है कि जरूरत पड़ने पर शादी के दिन दलित परिवार को सुरक्षा मुहैया कराई जाएगी।

डीसा के पास गोल गांव में रहने वाले सेंधाभाई भदरू का कहना है कि उनके छोटे बेटे हितेश की शादी के निमंत्रण कार्ड पर उन्होंने बाबा साहेब आंबेडकर की तस्वीर भी छपवाई है। शादी के कार्यक्रम के दौरान बुद्ध की मूर्ति स्थापित करने की बात भी कार्ड में लिखी गई है। कार्ड पर जय भीम और नमो बुद्धाय भी लिखा गया है। उन्होंने कहा, हमने अपने परिवार के बच्चों के नाम के साथ सिंह लगाया है इसलिए हमको धमकी मिल रही है। सिंह कार्ड में नाम के साथ उस जगह पर लिखा गया है, जहां बच्चों के नाम के साथ मेहमानों से जरूर-जरूर आने की बात लिखी जाती है। सेंधाभाई के दूसरे पुत्र कांजीभाई पुलिस अधिकारी हैं और उनके छोटेभाई हितेश की 12 मई को शादी तय हुई है। सेंधाभाई ने बीबीसी से कहा, हमने अपने नाम के साथ सिंह उपनाम लगाया है इसलिए हमारा जीना हराम कर दिया गया है। हमको रोज धमकियां मिल रही हैं। हमें शादी की खरीददारी करने जाते हुए भी डर लग रहा है। हमारी बहन-बेटियों को घर से उठा लेने की धमकियां दी जा रही हैं।

सेंधाभाई के बड़े बेटे केसरभाई कहते हैं, हमें मिली धमकी की बात समाज में चारों तरफ फैल चुकी है। अब हमारे घर शादी में कौन आएगा ये भी एक सवाल है। हमें डर है कि शादी के दिन कुछ हंगामा होगा तो बहन-बेटियां सलामत रहेंगी या नहीं। पुलिस अधिकारी जेएन खांटे ने बीबीसी को बताया, हमने शिकायत को गंभीरता से लिया है। हमने कॉल डिटेल निकाल ली हैं और धमकी देने वालों को पकड़ने की कोशिश की जा रही है। गुजरात सरकार के सामाजिक और न्याय विभाग के मंत्री ईश्वर परमार ने बताया, सभी को अपने नाम के साथ कोई भी उपनाम लगाने की छूट है। इस तरह से दलितों को धमकी नहीं दी जा सकती है। हम दलित परिवार को पूरी सुरक्षा देंगे।

https://www.bbc.com/hindi/india-44017922

***

फुले कहते थे

मंदिर का मतलब होता हैं.... मानसिक गुलामी का रास्ता...! स्कूल का मतलब होता हैं... जीवन में प्रकाश का रास्ता...!! मंदिर की जब घंटी बजती है तो हमें सन्देश देती है की हम धर्म, अन्धविश्वास, पाखंड और मूर्खता की ओर बढ़ रहे... हैं...! वहीं जब स्कूल की घंटी बजती है तो ये सन्देश देती हैं.... कि हम तर्कपूर्ण ज्ञान और वैज्ञानिकता की ओर बढ़ रहे हैं....! अब तय आपको करना हैं कि आपको जाना कहां हैं?

भारत दुनियां का एकमात्र ऐसा देश हैं जहाँ...

कन्या दान होती हैं। मृत लोगो को भोजन खिलाया जाता हैं। जानवर को माँ कहाँ जाता हैं और उसी माँ का दूध बेचा जाता हैं और यदि ये माँ दूध न देवे तो इस माँ को ही बेच देते हैं इसके लाल।। जानवर का पेशाब पिया जाता हैं। प्यासे को पानी पिलाने से पहले उसकी जाति पूछी जाती हैं। जानवरो के रूप में भगवान अवतार लेते रहे हैं। महामानवों को राक्षस की उपाधि दी जाती हैं। जिसकी पूजा करते हैं उसके दर्शन होने पर कत्ल करते हैं। माँ बाप के लिए वृद्ध आश्रम खोले जाते हैं और जानवरों को माँ बाप बनाकर पुजवाया जाता हैं। ज्यादातर भगवान माँ के पेट से जन्म न लेकर जानवरो से पैदा हुए। यहाँ 33 करोड़ देवी-देवता विराजमान हैं । लड़के को शादी के नाम पर बेचा जाता हैं लड़की पक्ष भुगतान करता हैं। अनपढ़ लोगो से ज्ञान लिया जाता हैं।। इत्यादि । भारत ही ऐसा देश है जहाँ मुसलमानों को हमेशा अपनी देशभक्ति का सबूत देना पड़ता है, शूद्र को अपनी काबलियत का और औरतो को अपने चरित्र का।

पाठकों से अपील

'वॉयस ऑफ बुद्धा' के सभी पाठकों से निवेदन है कि जिन्होंने अभी तक वार्षिक शुल्क/शुल्क जमा नहीं किया है, वे शीघ्र ही बैंक ड्रॉफ्ट द्वारा 'जस्टिस पब्लिकेशंस' के नाम से टी-22, अतुल ग्रोव रोड, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली-110001 को भेजें। शुल्क 'जस्टिस पब्लिकेशंस' के खाता संख्या **0636000102165381** जो पंजाब नेशनल बैंक की जनपथ ब्रांच में है, सीधे जमा किया जा सकता है। जमा कराने के तुरंत बाद इसकी सूचना ईमेल, दूरभाष या पत्र द्वारा दें। कृपया 'वॉयस ऑफ बुद्धा' के नाम ड्राफ्ट या पैसा न भेजें और मनीआर्डर द्वारा भी शुल्क न भेजें। जिन लोगों के पास 'वॉयस ऑफ बुद्धा' नहीं पहुंच रहा है, वे सदस्यता संख्या सहित लिखें और संबंधित डाकघर से भी सम्पर्क करें। आर्थिक स्थिति दयनीय है, अतः इस आंदोलन को सहयोग देने के लिए खुलकर दान या चंदा दें।

सहयोग राशि:

पांच वर्ष : 600 रुपए

एक वर्ष : 150 रुपए

अद्वितीय समाजसुधारक राजा राम मोहन राय

नवीन मानवता और नये भारतवर्ष की कल्पना करने वाले राजा राम मोहन राय ने हमें आधुनिकता की राह दिखाई। राजा राम मोहन राय की प्रतिभा बहुमुखी थी। सार्वभौमिकता के संदेश वाहक, स्वतंत्रता के सभी पक्षों के उत्साही समर्थक तथा प्रेस की स्वतंत्रता और रैयत के अधिकारों के लिये राजनीतिक आन्दोलन कर्ता थे। आधुनिक प्रवृत्ति तथा प्रभाव का गुणात्मक स्तर प्रदान करने वाले राजा राम मोहन राय आधुनिकता के प्रवर्तकों में प्रथम थे। आधुनिक भारत की परिकल्पना में जो प्रयास किये जा रहे हैं उसका पूर्वाभास राजा राम मोहन राय के विचारों एवं कार्यो में विद्यमान था। राजा राम मोहन राय का जन्म 22 मई 1772 को बंगाल के हुगली जिले के राधा नगर गाँव में हुआ था। पिता का नाम रमाकान्त राय एवं माता का नाम तारिणी देवी था। उनके प्रपितामह कृष्ण चन्द्र बर्नजी बंगाल के नवाब की सेवा में थे। उन्हें राय की उपाधि प्राप्त थी। ब्रिटिश शाशकों के समक्ष दिल्ली के मुगल सम्राट की स्थिति स्पष्ट करने के कारण सम्राट ने उन्हें राजा की उपाधि से विभूषित किया था। प्रतिभा के धनी राजा राम मोहन राय बहुभाषाविद् थे। उन्हें बंगला, फारसी, अरबी, संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, ग्रीक, फ्रैन्च, लेटिन आदि भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। इन भाषाओं में वे अपने भावों को कुशलता से अभिव्यक्त करने की क्षमता रखते थे। वैष्णव भक्त परिवार के होने के बावजूद राजा राम मोहन राय की आस्था अन्य धर्मो में भी थी।

वेद एवं उपनिषदों में प्रतिपादित एकेश्वरवाद में आस्था रखने वाले राजा जी ने इस्लाम धर्म का गहन अध्ययन किया। मूर्ति पूजा में उनकी आस्था नहीं थी। एक अंग्रेजी पत्र ने लिखा था कि, राजा राम मोहन राय को गवर्नर जनरल बना देना चाहिये क्योंकि वे न हिन्दू हैं न मुसलमान और न ईसाई। ऐसी स्थिति में वे निष्पक्षता से गवर्नर जनरल का कार्यभार संभाल सकते हैं। ये कहना अतिशयोक्ति न होगी कि राजा राम मोहन राय केवल हिन्दू पुनरुत्थान के प्रतीक नहीं थे अपितु सच्चे अर्थ में वे धर्म निरपेक्षता वादी थे। 1802 में उन्होंने एकेश्वरवाद के समर्थन में फारसी भाषा में ''टुफरवुल मुवादिन'' नामक पुस्तक की रचना की। इस पुस्तक की भूमिका उन्होंने अरबी भाषा में लिखी। 1816 में उनकी पुस्तक ''वेदान्त सार'' का प्रकाशन हुआ जिसके माध्यम से उन्होंने ईश्वरवाद और कर्म–काण्ड की घोर आलोचना की। जीविकोपार्जन हेतु रंगपुर में ईस्ट इण्डिया के अधीन नौकरी किये और बाद में रंगपुर की कलक्टरी में दीवान बन गये। 1815 में आत्मीय सभा तथा 1819 में कलकत्ता युनेटेरियन कमेटी की स्थापना आपके द्वारा की गई। मध्य युगीन दलदल में फंसे इस देश में आपने वो जान फूंकी जिससे भारतीय चिन्तन तथा जीवन की धारा ही बदल गई। अपनी प्रचार प्रतिभा और मानव सेवा की अपूर्ण भावना के साथ तथा विवेक पूर्ण और विश्व जनीय दृष्टि से राजा राम मोहन राय भारत में पुनर्जागरण तथा धर्म सुधार दोनों को एक साथ लाने में सफल हुए।

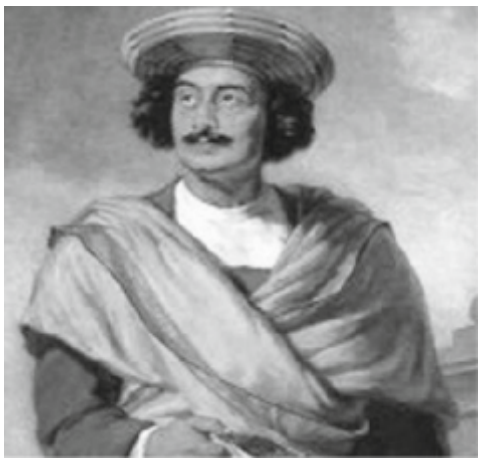

20 अगस्त, 1828 को ब्रह्म समाज की स्थापना की। ब्रह्म समाज ईश्वर को निराकार मानता है। सदाचार, दया भाव, निर्भयता और प्रेम की शिक्षा देना ब्रह्म समाज का उद्देश्य है। प्रसिद्ध इतिहासकार मैक्स मूलर ने ब्रह्म समाज के विषय में कहा था कि यदि भारत में कभी भी कोई नया धर्म होगा तो मुझे विश्वास है कि वह अपने जीवन संचार के लिये राम मोहन राय, योग शिष्य देवेन्द्र नाथ टैगोर तथा केशव चन्द्र के विशाल हृदय का ऋणी रहेगा। राजा राम मोहन राय सती प्रथा को अमानुषिक मानते थे। उनके अनुसार सह मरण का सिद्धान्त शास्त्र के अनुसार सत्य नहीं हैं अपितु ये सोच विकृत कुसंस्कार है। आपके प्रयासों का ही परिणाम है कि लॉर्ड बैंटिक ने 4 दिसम्बर, 1829 को एक आदेश जारी किया जिसके तहत सती प्रथा पर रोक लगाई गई। जब जनता को अपने नागरिक अधिकारों का कोई ज्ञान न था और विदेशी हुकूमत के सामने अपनी बात रखने की सोचता भी न था तब राजा राम मोहन राय ने राजनीतिक जागरण में अपना अमूल्य योगदान दिया। अपने ओजपूर्ण राजनीतिक विचारों को शासन सत्ता के केन्द्र तक पहुँचाने में कामयाब रहे। भारत में राजनीतिक और सामाजिक चेतना जगाने के कारण ही उन्हें नये भारत का संदेश वाहक कहा जाता है। सुरेन्द्र नाथ बनर्जी ने उन्हें संवैधानिक जागरूकता का जनक कहा था। राजा राम मोहन राय को व्यक्ति की स्वतंत्रता, स्वायत्ता, समानता तथा न्याय में दृढ़ विश्वास था। उन्होंने राजनीतिक मूल्यों का कभी भी परित्याग नहीं किया। भारत को राजनीतिक स्वतंत्रता का संदेश देने वाले राजा राम मोहन राय पहले व्यक्ति थे। राजा राम मोहन राय एक पत्रकार, सम्पादक तथा लेखक थे। ''संवाद कौमदी'' का बँगला भाषा में तथा पर्शियन भाषा में ''विराट उल'' अखबार का सफल संपादन किया। लिखित अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के सिद्धान्त का समर्थन करते थे। 1823 में द्वारका नाथ ठाकुर, सज्जन बोस गौरी शंकर बनर्जी तथा चन्द्र कुमार आदि के साथ मिलकर हाई कोर्ट के सामने एक याचिका प्रस्तुत करके उन्होंने प्रेस की स्वतंत्रता की माँग की थी। याचिका अस्वीकृत कर देने पर राजा राम मोहन राय ने इस निर्णय के विरुद्ध मंत्री परिषद में अपील की।

राजा राम मोहन राय की शिक्षा और विज्ञान में गहरी आस्था थी। आपके शिक्षा संबन्धी विचार रचनात्मक थे। 1816 में आपने कलकत्ता में अंग्रेजी स्कूल की स्थापना की। ये पहला अंग्रेजी स्कूल था जिसका व्यय पूर्णतः भारतीयों द्वारा वहन किया जाता था। आपके प्रयासों से 1822 तथा 1823 में हिन्दू कॉलेज की स्थापना हुई। राजा राम मोहन राय ने अपने मस्तिष्क पर पूर्वाग्रहों को कभी भी हावी होने नहीं दिया। उनका मानना था कि अंग्रेजी शिक्षा और पश्चिमी शिक्षा भारत के लिये लाभदायक है। आपने वेदों तथा उपनिषदों का बंगाली तथा अंग्रेजी में अनुवाद किया। आपने इस बात का खण्डन किया कि ईसाई स्कूल में बाइबिल पढ़ाने से जाति भ्रष्ट होने का डर रहता है। समाज सुधारक राजा राम मोहन राय का मानना था राजनीतिक विकास का तब तक कोई मूल्य नहीं है जब तक समाज का सुधार या विकास नहीं होगा। समाज सुधार में स्त्री शिक्षा के वे पक्षधर थे। अतः नारी शिक्षा और स्त्रियों के अधिकारों पर विशेष बल दिये। राजा राम मोहन राय पहले भारतीय हैं जिन्होंने ये कहा कि पिता की सम्पत्ति में बेटी का भी कानूनी हक होना चाहिये। नारी पर हो रहे अत्याचारों के खिलाफ आपने आवाज उठाई थी। विधवा विवाह के समर्थक थे। बाल विवाह के विरोधी थे। राजा राम मोहन राय परम्परा के खिलाफ थे क्योंकि उनका कहना था कि परम्परा के तहत कई बार अविवेक पूर्ण कार्य को श्रद्धा का विषय बना दिया जाता है। सामाजिक समस्याओं के प्रति सदैव जागरुक रहे। वे जमींदारों को किसानों का शोषक कहते थे। 15 नवम्बर, 1830 को समुद्री रास्ते से इंग्लैण्ड के लिये रवाना हुए। अप्रैल 1832 को इंग्लैण्ड पहुँचे जहाँ अंग्रेजों ने आपका स्वागत स्नेह और सम्मान के साथ किया। 27 सितंबर, 1833 को ब्रिस्टल में इस नश्वर संसार का त्याग करके ब्रह्म लोक में विलीन हो गये। समाज की समस्याओं को सत्ता के केन्द्र तक पहुँचाने वाले राजा राम मोहन राय ने एक ऐसे मार्ग का निर्माण किया जिसपर चल कर भावी धर्म और समाज सुधारक आपके विचारों को क्षितिज तक पहुँचाते रहेंगे। ये कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि राजा राम मोहन राय भारतीय राष्ट्रीयता के पैगम्बर और आधुनिक भारत के जनक थे ।

https://www.achhikhabar.com/2013/05/22/raja-ram-mohan-roy-essay-biography-jayanti-in-hindi/

***

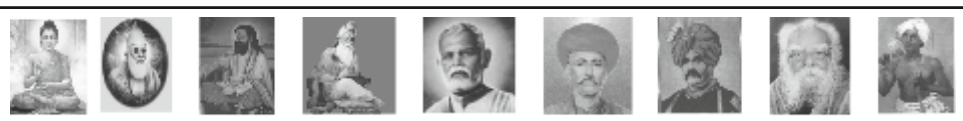

अनुसूचित जाति/जनजाति संगठनों का
अखिल भारतीय परिसंघ

राजस्थान परिसंघ के लोगों का 17 जून को हो रहे है मावलंकर हॉल, नई दिल्ली में परिसंघ के सम्मलेन में आना था लेकिन अब कार्यक्रम में परिवर्तन कर दिया गया है, राजस्थान प्रदेश का सम्मलेन 16 जून, 2018 शनिवार को इंदिरा गाँधी पंचायती राज संस्थान सभागार, जेएल एन मार्ग, जयपुर में होना सुनुश्चित हुआ है अतः राजस्थान के साथी 16 जून को 11 बजे वहाँ उपस्थित हों ।

राजस्थान प्रदेश सम्मेलन

16 जून, 2018 शनिवार प्रात : 11 बजे
इंदिरा गाँधी पंचायती राज संस्थान सभागार,
जे.एल.एन मार्ग, जयपुर (राजस्थान)

मुख्य अतिथि : डॉ. उदित राज, राष्ट्रीय अध्यक्ष

: सम्पर्क :
मनीराम बडगुजर
मो. 9983537776

AIParisangh AIParisangh 9899766443 parisangh1997@gmail.com All India Parisangh www.aiparisangh.com

दलित, ओबीसी और माईनॉरटी संगठनों का परिसंघ, डॉ. उदित राज जी के नेतृत्व मे जनांदोलन की तैयारी

लखनऊ : दलित, ओबीसी और माईनॉरटी के कई संगठनों ने मिलाकर डीओएम परिसंघ का गठन किया गया

है। परिसंघ द्वारा सामाजिक चिंतक और डॉ. उदित राज के नेतृत्व मे बड़े जनांदोलन की तैयारी की जा रही है। दलित, ओबीसी और माईनॉरटी परिसंघ (डीओएम) की आरंभिक बैठक गोमती नगर स्थित होटल में हुयी, जिसमें दलित, पिछड़े और अल्पसंख्यक समुदाय के तमाम संगठनों के प्रमुखों ने शिरकत की। संगठन प्रमुखों को संबोधित करते हुये डॉ. उदित राज जी ने कहा कि पदोन्नति में जो आरक्षण समाप्त हुआ हैं, वह न्यायपालिका की वजह से हुआ है। विधायिका सीधे आरक्षण समाप्त नहीं कर सकती है, इसलिये ये काम अब न्यायपालिका से कराना शुरू कर दिया। उन्होंने कहा कि मनुवादी व्यवस्था अब इस तरह काम कर रही है। उन्होने इसाई शिक्षण संस्थानों पर हो रहे हमलों का जिक्र करते हुये कहा कि जब तक इसाई शिक्षण संस्थानों में सवर्णो के बच्चे पढ़ रहे थे तब तक सब कुछ ठीक था। लेकिन जैसे ही इसाई शिक्षण संस्थानों ने दलित, ओबीसी के बच्चों को पढ़ाना शुरू किया इन संस्थाओं पर हमले होने लगे। बताया जाने लगा कि ये हिंदू धर्म को कमजोर कर रहे हैं, हिंदू विरोधी हैं, इसाई धर्म को बढ़ा रहे हैं। आरक्षण की बात करते हुये डॉ. उदित राज ने कहा कि अब तो कई अध्ययनों से यह सिद्ध हो गया है कि आरक्षण पाये हुए लोग जहां काम करते हैं, वहां प्रोडक्शन अधिक होता है। सामाजिक चिंतक ने मेरिट की बात करने वालों पर हमला करते हुये मिलर कमेटी का जिक्र किया। उन्होंने आरक्षण को लेकर एससी, एसटी और ओबीसी पर किये गये दो अध्ययनों का भी जिक्र किया। उन्होने बताया कि मिशिगन यूनिवर्सिटी द्वारा रेलवे मे आरक्षण पाये लोगों पर अध्ययन किया गया और ये पाया कि आरक्षित वर्ग के लोग जहां काम कर रहे थे वहां प्रोडक्शन अधिक हुआ। मनरेगा में एससी, एसटी और ओबीसी के आईएएस अफसरों पर किये गयी स्टडी का जिक्र करते हुये कहा कि इस स्टडी ने भी सिद्ध कर दिया कि आरक्षण से कहीं भी उत्पादन क्षमता या प्रशासनिक क्षमता मे कमी नहीं आयी बल्कि वहां बेहतर काम हुआ। डॉ. उदित राज जी ने कहा कि जब तक सभी जातियों का देश के निर्माण मे योगदान नही होगा तब तक देश महान नहीं हो सकता है। ऐसा नही हो सकता कि देश का 85 प्रतिशत तबका गरीब, लाचार रहे, मुख्यधारा से अलग रहे और देश विकसित हो जाये। उन्होंने कहा कि इसके लिये देश के 85 प्रतिशत तबके को इम्पावर करना होगा। उन्होने कहा कि जहां पर रिजर्वेशन पहले आया, दलितों, पिछड़ों के सामाजिक आंदोलन पहले हुए। वह राज्य आज आगे हैं और जहां ये नहीं हुआ वह राज्य पिछड़ गये। उन्होंने उदाहरण देते हुये कहा कि आप दक्षिण के राज्यों को देखिये वह उत्तर के राज्यों से कहीं ज्यादा आगे हैं।

सामाजिक चिंतक ने कहा कि आज एससी, एसटी और ओबीसी के अधिकारों को धीरे-धीरे समाप्त करने की साजिश रची जा रही है। इसके लिये यह जरूरी है सभी वंचित तबके एक मंच पर आयें और अपने अधिकारों के लिये सड़क पर उतर कर संघर्ष करें। उन्होने कहा कि इसके लिये डीओएम जैसे संगठन की आज जरूरत है। यह एक गैर राजनैतिक संगठन है जिसमें दलित, ओबीसी और माईनॉरटी के सभी प्रमुख संगठन जुड़ें हैं। उन्होंने डीओएम के सदस्यों का अह्वाहन करते हुये कहा कि अब अगर हमने संघर्ष का रास्ता नहीं अपनाया तो कुछ नहीं बचेगा। आप इस तरह संगठन को तैयार करें कि एक काल पर आपके सदस्य कहीं पर भी, किसी भी समय उपस्थित हो जायें और इस प्रयोग की शुरुआत यूपी से होगी।

कार्यक्रम को उपकुलपति डॉ. आर. बी.लाल, चौरसिया महासभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष राजेश्वर चौरसिया, पिछड़ा वर्ग संघ के अध्यक्ष राम लोटन निषाद, महासचिव विशवकर्मा, राष्ट्रीय पिछड़ा वर्ग आयोग के सदस्य साहू अक्षय भाई ने भी संबोधित किया। डीओएम के प्रदेश महासचिव सुशील कमल ने प्रदेश स्तरीय संगठन के गठन के लिये आगे की योजना के प्रारूप पर चर्चा की। कार्यक्रम का संचालन डीओएम के प्रदेश अध्यक्ष डॉ. वीरेंद्र यादव ने किया।

http://news85.in/confederation-of-dalit-obc-and-minority-organizations-started-preparing-for-janaandolan-under-the-leadership-of-uditraj/

परिसंघ उत्तर प्रदेश इकाई की कार्यकारिणी बैठक सम्पन्न

दिनांक 20 मई, 2018 को परिसंघ उत्तर प्रदेश इकाई के पदाधिकारियों एवं कार्यकर्ताओं की बैठक सेन्ट जेवियर्स कानवेन्ट स्कूल, विनीत खण्ड, लखनऊ में सम्पन्न हुई जिसमें मुख्य अतिथि परिसंघ के चेयरमैन डॉ. उदित राज जी की

उपस्थिति में बहुत से विषयों पर चर्चा हुई जिसमें पूरे प्रदेश से लगभग 32 जिलों से पदाधिकारी/कार्यकर्ता शामिल हुए।

बैठक को सम्बोधित करते हुए चेयरमैन डॉ. उदित राज जी ने सभी को अपने-अपने क्षेत्रों जल्दी से जल्दी कार्यकारिणी गठन कर उनकी जिला/मण्डल स्तर पर मीटिंग करने को कहा साथ ही सभी का परिसंघ से जोड़ने के तरीके समझाये जिससे वहां उपस्थित सभी कार्यकर्ताओं में जबरदस्त उत्साह वर्धन हुआ। इसके साथ ही उन्होंने प्रदेशाध्यक्ष सुशील कुमार कमल को निर्देशित करते हुए मुख्य पदाधिकारियों को पूरे पद्रेश के साथ ही विशेष रूप से प्रदेश महासचिव नीरज चक को मध्य जोन प्रदेश महासचिव राज कुमार जी को पूर्व जोन और प्रदेश महासचिव केदार नाथ को पश्चिम जोन की विशेष जिम्मेदारी सौंपी गई।

प्रदेश सचिव जिया लाल जी फैजाबाद, गोंडा, बस्ती और आजमगढ़ मण्डलों पर विशेष ध्याान देने को कहा। जोनल कोआर्डिनेटर आर. के. कमल जी को पूरा बुन्देलखण्ड, झाँसी, चित्रकूट, कानपूर, इलाहाबाद मण्डलों, पर अधिक कार्य करने को कहा, प्रदेश उपाध्यक्ष पंचमलाल जी को तीनों जोन पर रिपोर्ट बनाने को कहा।

साथ ही प्रदेशाध्यक्ष सुशील कुमार कमल को निर्देशित किया प्रदेश/ जोन/ मण्डल के पदाधिकारियों की महीने में एक बार बैठक जरूर करनी चाहिए। साथ ही पूरे प्रदेश के 18 मण्डलों में जाकर स्वयं जिलाध्यक्षों की मीटिंग जरूर करे। इसके साथ ही प्रदेशाध्यक्ष सुशील कमल ने सभी से चर्चा करते हुए जल्दी से जल्दी लखनऊ में एक बड़ा प्रदेशीय सम्मेलन करने पर जोर दिया जिसका सभी ने समर्थन किया। इसके अलावा मीटिंग में सुल्तानपुर, गोंड, गोरखपुर, झाँसी, मेरठ, बरेली और गाजियाबाद में जिला स्तर की मीटिंग होना तय हुआ और मुख्य सम्मेलन से पहले ज्यादा से ज्यादा जिलों में मीटिंग करके कार्यकारिणी पूर्ण कर ली जाए।

2018 की प्रथम बैठक में कानपूर से जिलाध्यक्ष मन्जीत कमल, औरया जिलाध्यक्ष दर्शन लाल, मुकेश कुमार जिला महासचिव वर्मा, बरेली, गोण्डा मण्डल अध्यक्ष सत्यानारायण सोनकर, लखनऊ जिलाध्यक्ष राजेश वर्मा, मुजफ्फर नगर जिलाध्यक्ष राजकुमार, बलरामपुर जिलाध्यक्ष विजय पाल, श्रावस्ती जिलाध्यक्ष अशोक, सुल्तापुर जिला संयोजक कुलदीप कुमार, मेरठ जिलाध्यक्ष प्रेमजीत सिंह, फैजाबाद जिलाध्यक्ष राजपाल सिंह, हरदोई जिलाध्यक्ष नरेश राज के अलावा बहुत से लोगों ने अपने-अपने विचार रखे।

– सुशील कुमार कमल
प्रदेश अध्यक्ष, उत्तर प्रदेश परिसंघ

मिशन बुनियाद एक उम्मीद - शिक्षा कौशल मे सुधार के लिए शिक्षा योजना

जीवन में ज्ञान का कितना महत्व हैं ये हम सब जानते हैं, शिक्षा के बिना हमारा जीवन मतलब नमक के बिना खाना। हम सब हर साल 8 सितम्बर को अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस मनाते हैं, लेकिन आज भी अपने देश में ऐसे कई लोग और बच्चे हैं जो लोग शिक्षा से वंचित हैं और काफी बडी संख्या मे बच्चे पढ़ने में पीछे रह जाते है उन्ही कमजोर बच्चों को साथ लाने के लिए इसकी शुरुआत की गई है। इस मिशन के तहत सरकार शिक्षिकों को प्रशिक्षित करने के लिए हर संभव प्रयास करेगी। यह नई शिक्षा योजना यह सुनिश्चित करेगी कि सभी छात्र अपने ग्रेड स्तरों की पाठ्यपुस्तकों को पढ़ सकें। अब सवाल यह है कि मिशन बुनियाद की आवश्यकता क्यों पड़ी? राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण National Achievement Survey (NAS) की रिपोर्ट बताती है की देश भर के स्कूल जिसमें दिल्ली के स्कूल भी शामिल हैं सीखने की समस्या का सामना कर रहे हैं। यह सर्वेक्षण शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद /National Council of Educational Research and Training (NCERT) द्वारा आयोजित किया गया था। NAS की रिपोर्ट के अनुसार, भारतीय विद्यालयों में कक्षा तीसरी के लगभग 50 प्रतिशत बच्चे अपने ग्रेड स्तर की पाठ्यपुस्तकों को पढ़ने में असमर्थ हैं। विभिन्न निगम विद्यालयों में प्राथमिक कक्षाओं में पढ़ रहे बच्चे पढ़ने में असमर्थ हैं जिसका प्रभाव उनके माध्यमिक विद्यालयों के अध्ययनों में भी पड़ेगा। यही वजह है जिससे इन छात्रों को उन्नत स्तर के अध्ययन में मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। दिल्ली सरकार माध्यमिक विद्यालय के छात्रों की पढ़ने की क्षमता को 20 प्रतिशत तक बढ़ाने के लिए पहले से ही कई पहल अपना चुकी है। सरकार अब प्राथमिक विद्यालय के छात्रों की सीखने की प्रक्रिया में और सुधार करने के लिए प्रयासरत है।

मिशन बुनियाद फॉर स्टूडेंट्स' नामक एक नई शिक्षा योजना शुरू कर रही है। इस योजना के अंतर्गत, राज्य सरकार कई स्कूलों के सीखने के परिणामों की जांच करेगी, जो राज्य सरकारों या नगर निगमों द्वारा संचालित होते हैं। इसके अलावा, राज्य सरकार के मानक से सातवीं मानक के बीच अध्ययन करने वाले बच्चों के प्रदर्शन पर नजर रखने के लिए सलाहकार नियुक्त करेगी। इसके अलावा, प्रत्येक संरक्षक 5 से 10 स्कूलों के लिए यह कार्य करेगें। यह योजना राज्य सरकार द्वारा एमसीडी और अन्य स्थानीय निकायों के साथ डिजाइन और निष्पादित की जाएगी। राज्य सरकार चुनौती योजना के आधार पर इस योजना को डिजाइन करेगी। दिल्ली सरकार के मिशन बुनियाद योजना स्कूलों में सीखने के संकट के मुद्दे को हल करेगी। राज्य सरकार अप्रैल 2018 से इस योजना को शुरू करेगी। इसके अलावा, राज्य सरकार शिक्षक/प्रशिक्षण परिणाम समन्वयकों को प्रशिक्षण देने के लिए अपनी पूरी कोशिश करेगी। यह योजना सुनिश्चित करेगी कि सभी छात्र अपनी ग्रेड स्तर की पाठ्यपुस्तकों को पढ़ सकें।

इस अभियान में, कक्षा 3 से लेकर पांच तक के बच्चों को शामिल किया जाएगा। पहला परीक्षण लेकर बच्चों के ज्ञान का आकलन किया जाएगा। उसी आधार पर, अलग कक्षाएं लगाकर बच्चों को मजबूत किया जाएगा। दिल्ली के विद्यालयों में छह से आठ कक्षा के छात्रों में से आधे छात्र अपनी पुस्तकों को ठीक से नहीं पढ़ सकते हैं। उनके पास गणित का सामान्य ज्ञान भी नहीं है। मिशन बुनियाद के तहत मनोरंजक कहानियों से बच्चों को शिक्षित किया जाएगा। यह मिशन बच्चों की नींव को मजबूत करने में अहम भूमिका निभाएगा। दो फेज में चलने वाली यह योजना 2 अप्रैल से 30 जून तक सभी स्कूलों में चलाई जाएगी। जिसमें पहला फेज 2 अप्रैल से 10 मई तक और दूसरा फेज 11 मई से 30 जून तक चलेगा। इस योजना में बच्चों की पढ़ाई से संबंधित सभी समस्याओं का हल निकाला जाएगा और उन्हें अन्य गतिविधियों में भी निखारा जाएगा।

भाषायी ज्ञान हो या गणित का गुणा-भाग सभी की जानकारी और सभी विषयों में मजबूती बनाने के लिए सरकार मिशन बुनियाद शुरू करने जा रही है। दिल्ली के सभी सरकारी स्कूलों में कक्षा 3 से लेकर 9वीं तक लाखों बच्चे पढ़ रहे हैं। जिनमें से कई बच्चों को न ही किताबों में लिखे अक्षर समझ आते हैं और न ही गणित के बेसिक सवालों को हल कर पाते हैं। 3 महीने के इस कैम्प में बच्चों को सभी बेसिक जानकारियां दी जाएंगी। सरकार ने शिक्षकों को इस मिशन की ट्रेनिंग देने के लिए मैन्युअल भी जारी कर दिया है। जिसमें सरकार ने अध्यापकों को बच्चों को पढ़ाने के सभी तकनीकी जानकारियां मुहैया कराई हैं। 2 अप्रैल से 10 मई तक चलने वाला पहला फेज स्कूल के समयानुसार ही चलेगा। लेकिन 11 मई से शुरू होकर 30 जून तक खत्म होने वाला दूसरा फेज समर कैम्प के नाम से जाना जाएगा।

21 अप्रैल को स्कूल लेवल पर मेगा पैरेंट्स टीचर मीटिंग का आयोजन किया गया। जिसमें अध्यापक ने सभी परिजनों को इस कैम्प के बारे में जानकारी देते हुए उनसे बच्चों को कैम्प का हिस्सा बनाने की सलाह दी। इतना ही नहीं, स्कूल प्रशासन हफ्ते के आखिरी में परिजनों को मैसेज के जरिए बच्चों को कैम्प में भेजने का अनुरोध भी किया गया । इस मिशन का प्रतिपादन विद्यालयों में न्यू निष्ठा, निष्ठा, प्रतिभा ग्रुपों के माध्यम से क्रियान्वित किया जा रहा है। पर मिशन बुनियाद की सरकार द्वारा चलाई मुहीम कितनी सफल हो सकेगी यह तो आने वाला समय ही बतायेगा क्योंकि इसके क्रियान्वयन में न केवल दिल्ली सरकार बल्कि तीनों निगमों के लिए अलग अलग समय व मापदंड निर्धारित करे गये है और एक सवाल यह की मई जून मे ज्यातर बच्चे गांव इत्यादि बाहर होते है, तो ऐसे में बच्चो की संख्या काफी कम हो रही हैं तो ऐसे में हम हमारे मिशन बुनियाद के लक्ष्य को कैसे प्राप्त कर सकते है। इससे अच्छा तो यह रहता कि मिशन बुनियाद का एक फेज 2अप्रैल से 10 मई और दूसरा फेज जुलाई अगस्त में आरंभ किया जाता । दूसरा जहा आज शिक्षक वेतन सभय पर न मिलने की जद्दोजहद से गुजर रहा है। वहा विभाग द्वारा मिशन बुनियाद के लिए बच्चों की दी जाने वाली शिक्षण सामग्री व रिफ्रेशमेंट का जिम्मा भी विद्यालय व शिक्षकों पर डाल दिया हैं, यह कहते हुए की शिक्षककों इसकी लागता का भूगतान बाद में विभाग द्वारा भुगतान कर दिया जाऐगा। जब इस मिशन की बुनियाद रूपी प्रारूप ही इतना कमजोर है, तो बच्चों की बुनियाद कैसे मजबूत हो सकती हैं। किसी भी बुनियाद को सफल बनाने के लिये पहले उसके प्रारूप को मजबूत होना चाहिए। बहरहाल हम सभी मिशन बुनियाद को सफल बनाने मे प्रयासरत हैं।

– सविता कांदियान पंवार,
राष्ट्रीय संयोजिका
परिसंघ महिला प्रकोष्ठ
मो. 9873944026

***

SC collegium recommending 'incompetent' lawyers: Judge

KOCHI: Justice B Kemal Pasha of Kerala high court on Thursday lashed out at the Supreme Court collegium for recommending the names of "incompetent" lawyers for appointment as judges.

Addressing the court reference held in connection with his retirement, Justice Pasha said, "Appointment of judges is not a family property of someone to be partitioned. I do not believe that judgeship should be allotted to each and every religion, caste or sub-caste. I learn from media that some names from the bar have been recommended for elevation. If the names given by the media are correct, I can very well say that most of the judges of this court, including me, have no good fortune to even see the faces of some of those persons. Is it good for the judiciary?"

The judge said picking and choosing people who are not at all competent to be judges and to recommend them for elevation will point fingers at the system. "A judge is being considered as a minister of this temple of justice. The duty to impart justice is nothing but a divine function also. When persons who have to perform divine functions are to be selected, they should have the capacity for it," Justice Pasha said.

He called upon the bar to react whenever incidents "hurting its good name" happened. He said hurdles are created by extra-judicial forces, and sometimes from within the system. "...I earnestly believe that the brethren in the bar have to take up issues and react to it, if it is felt that there is any substance to it, so that it will have a cleansing effect. I recollect that the Bombay bar had come down heavily and reacted strongly when they could realise that certain judges were indulging in corruption," he said.

https://timesofindia.indiatimes.com/india/sc-collegium-recommending-incompetent-lawyers-judge/articleshow/64311211.cms

***

परिसंघ की वेबसाइट पर ऑनलाइन सदस्य बनें

अनुसूचित जाति/जन जाति संगठनों का अखिल भारतीय परिसंघ की वेबसाइट www.aiparisangh.com पर अब ऑनलाइन सदस्यता का प्रावधान कर दिया गया है। वेबसाइट पर जाकर कोई भी सदस्यता शुल्क की ऑनलाइन पेमेंट करके वार्षिक एवं आजीवन सदस्य बन सकता है। इस पर डेबिट कार्ड, क्रेडिट कार्ड, नेट बैंकिंग आदि सभी माध्यमों से पेमेंट की जा सकती है। अब कोशिश रहे कि ज्यादातर ऑनलाइन ही किया जाए, फिर भी यदि सदस्यता फार्म और डोनेशन की रसीदें छपी हुई चाहिए तो राष्ट्रीय कार्यालय में सुमित मो . 9868978306 से सम्पर्क किया जा सकता है।

परिसंघ के पदाधिकारियों से निवेदन है कि प्रयास करके अधिक से अधिक लोगों को सदस्य बनाएं। यदि प्रदेश या जिले स्तर के पदाधिकारी अन्य लोगों को सदस्य बना रहे हैं तो वे फार्म में रेफर्ड बाई के कॉलम में अपना नाम अवश्य लिखें, इससे राष्ट्रीय कार्यालय को पता लग सकेगा कि किस पदाधिकारी द्वारा कितना ऑनलाइन सदस्य बनाया गया है। इसके अलावा वेबसाइट पर परिसंघ का संक्षिप्त परिचय एवं राष्ट्रीय अध्यक्ष के परिचय के साथ-साथ राष्ट्रीय एवं प्रदेश पदाधिकारियों के फोटो के साथ पता एवं मोबाइल नंबर भी दिया गया है, (http://aiparisangh.com/office-bearers/) ताकि जो लोग अलग-अलग प्रदेशों से वेबसाइट देखें उन्हें पता लग सके कि उस प्रदेश के किस पदाधिकारी से सम्पर्क किया जा सकता है। इसके अलावा 'वॉयस ऑफ बुद्धा' भी वेबसाइट पर जाकर पढ़ा जा सकता है।

The More India's Elite Claims to Be Caste-Mukt, the Less We Should Believe Them

The last few weeks have seen the most venomous, militant, blatant and intransigent display of casteism by internet and tech savvy upper-castes on social media.

Ashwini Deshpande

On April 2, India saw a vicious and malignant display of casteism, with a million instances of confirmation that caste is a living reality of 21st-century globalising India, no hangover from the past, and not at all a quaint rural relic. I am not referring to the protests against the dilution of the SC/ST (Prevention of Atrocities) Act that shook the country, but to the most venomous, militant, blatant and intransigent display of casteism by internet and tech savvy upper-castes on social media. WhatsApp, Twitter and Facebook continue to erupt in a frenzy of open hatred against Dalits and the reservation policy, not only in vernacular languages, but also in English. This is proof, if ever any was needed, of how caste consciousness is very much (also) a contemporary urban mindset, firmly ensconced in the minds of the so-called modern, globalised elite, who fail to see the irony in declaring that caste does not matter any more, claim themselves to be free of caste, yet unhesitatingly perpetrate completely fact-free caste prejudices and discriminatory stereotypes as immutable truths.

I got a virtual treasure trove of these messages on various platforms, which were mind-numbing in their blindness to the actuality, and were in comprehensive disregard to any known fact about the reality of Dalit-Adivasi lives. In complete contrast to the overwhelming evidence – that overall, Dalits are disproportionately mired in poverty, battle stigma and humiliation on a routine basis, face extreme violence and discrimination, and struggle to break the silence imposed by marginality and prejudice – the material in circulation depicted them, both pictorially and through words, as wallowing in state-sponsored luxuries, living a charmed and carefree life of idleness.

Reservation in this blinkered mindset is seen not as compensatory discrimination, not as an instrument to redress caste-based inequalities and to level the playing field somewhat, but as a policy that renders unfair an otherwise fair and just social order. It would be too much to ask if this highly caste-conscious elite ever bothered to look for any evidence on the actual working of reservation. Do they know that there is no evidence that it lowers efficiency, and plenty of evidence that, in fact, the benefits of reservation are greater than its costs? One of the messages was so over the top that it puts the claims of the achievements of Vedic science to shame. It went like this.

"Excerpts from a conversation with a SC/ST (sic) young man standing at a paan shop: why don't you earn a living? He said, why should I? I said, get married. I am married. How? Through the Chief Minister Kanyadan Scheme. Then earn for your children, I said. I get free childbirth through the Janani Suraksha Yojana, plus Rs. 1400. Earn for your children's education, then? Oh, they get free schooling, uniforms, books, and meals. My son is in college; he gets a scholarship because we are BPL, so we live very comfortably. I asked, but how do you actually manage your expenses? My younger daughter just got a bicycle, son got a laptop, parents get old-age pension, and we get wheat and rice for Rs. 1 per kilo. Irritated, I said, at least earn to be able to send your parents on a pilgrimage! Oh, they have already visited two (of the four) dhams through the Chief Minister Pilgrimage Scheme. But don't you need money for their last rites? I can cremate them for Rs. 1 at the electric crematorium. Exasperated, I said, at least earn to save for your children's marriage! He smiled, and said, they will get married the same way I did!"

This imaginary conversation, which goes on to describe this young man as a squatter on government land who takes a concessionary loan, builds a house, sells it and buys more land, is one of the more benign ones doing the WhatsApp rounds. Carried away by their enthusiasm, the creators of these messages decided to invent schemes that either don't exist or are not caste-specific (for instance, the pilgrimage scheme initiated by the Samajwadi Party government in UP, which Adityanath recently scrapped, was meant for all senior citizens regardless of caste or religion).

These messages are frightening not only because of the complete absence of truth, but more because well-educated professionals, including doctors, lawyers, chartered accountants and army captains, have been circulating them. These individuals occupy positions that enable them to take decisions affecting the lives of countless Indians, less privileged than themselves. I asked an army captain, who claimed that Dalits were the most privileged and Brahmins the least so in contemporary India, to choose any one area of privilege and show me evidence to prove his point. Within minutes came his reply, "They are not there because of their low IQ". And as far as stigma is concerned, "They thrive in it", and in his esteemed view, "STs are better because they come from a different racial stock". He adopted the classic shifting goalpost style of argument. When asked to prove Dalit privilege, he retorted by claiming they didn't deserve it, thereby unwittingly admitting that they were not privileged.

An overwhelming number of these messages are about the unfairness of the reservation policy as it spells the death of merit. Very conveniently, donation-based entry, management quotas, hereditary reservations in business houses and network-based job allocations are not discussed because these benefit PLUs (people like us). In this Manusmriti-driven mindset, any example of a rich Dalit is seen as an affront to a just social order – several messages bemoan the personal wealth of Mayawati, Mallikarjun Kharge and Ram Vilas Paswan. Finally, virtually all the messages proudly claim that they support reservation on economic grounds. Really? We now have a wealth of evidence that reveals the dark and ugly underbelly of the privileged elite – the obnoxious and distasteful behaviour of rich parents towards children admitted to private schools on the economically weaker sections quota, which is not caste-based. This sewage of open hatred shows that the opposition to reservations or to the PoA Act is a fig leaf. The real problem is that there is churning and upheaval in the centuries-old caste hierarchy. Reservations have created an educated and aware Dalit middle class that is vocal, active, articulate and demanding a just and humane society. Far too many upper-caste, "liberal" Indians feel threatened, don't like it and feel it is time to reassert their place in the caste hierarchy. Upper-caste India is not caste-mukt, and has no desire to be.

Postscript

The bandh called by the Dalit organisations against the dilution of the PoA Act was countered by another one on April 10 demanding the abolition of caste-based reservations. This shows the real intent of those who declare from rooftops that caste is dead: withdraw every policy that might possibly offer a level-playing field to Dalits. In the meanwhile, the Haryana government can show us the true face of "casteless" India for school admission, by saying students should write if their parents are in "unclean" occupations. Groups opposed to reservations find that asking people to check boxes of SC/ST etc. solidifies caste boundaries. Did anyone hear any protest marches by "youth for equality" declaring that no occupation is unclean? Make no mistake. The real agenda is to kick away the ladder, so that those who are at the bottom of the hierarchy stay there, and the vicious casteist social media posts are its ugly warning signs.

https://thewire.in/books/review-who-moved-my-waste

***

Job growth or number jugglery

The problem is under-employment. It won't be resolved if the residually-employed are notionally shifted from the informal to formal sector.

Written by Arun Kumar

In an article in January, Soumya Kanti Ghosh and Pulak Ghosh (Ghosh and Ghosh) claimed that seven million new jobs have been created in the formal sector. Their claim is based on the increase in registration under the Employees Provident Fund (EPFO), National Pension Scheme and Employees State Insurance Corporation. The government and the ruling party are now widely quoting this figure. In a column in this paper ('Robust job growth, not fake news,' IE, April 28), Surjit Bhalla has, by and large, endorsed this study. The Niti Aayog vice chairperson has discounted these figures slightly but added that 36 million jobs have perhaps been created by the Mudra Scheme and via self-employment in enterprises such as those pertaining to taxi aggregation and e-commerce.

This runs counter to the impression that the shocks of demonetisation and implementation of GST resulted in the loss of many jobs. There were reports of retrenchment of workers and workers migrating from urban to rural areas to seek employment under MGNREGS, and youngsters not getting jobs commensurate to their skills. With no social security, few in India can afford to remain unemployed. Many who do not get formal employment often have no option but to carry headload or push carts. Hence, the issue at stake is under-employment. This author has been arguing for long that the sector in which a person is employed, formal or informal, matters much in reckoning employment figures. If there is an increase of seven million jobs, has there been a corresponding decline in informal sector jobs? If taxi aggregators are offering jobs, are these at the expense of traditional taxi drivers and private chauffeurs? Seven million new jobs on a base of about 50 million in the formal sector would represent a growth of 14 per cent. Is this likely when the economy's growth rate plummeted after demonetisation and implementation of GST?

Why have the EPF registrations shown a sharp increase? There are two possibilities. One, this is a one off increase due to special reasons. Second, it is a trend. But then how come the total employment in the formal sector is only 50 million? With a 14 per cent growth rate, employment would double in 5.2 years. Public sector employment has been stagnant at about 20 million. So, the increase of seven million would have taken place largely in the private formal sector. This would give a growth rate of about 23 per cent with employment doubling in 3.5 years, and there would be no dearth of decent jobs for the young. Two factors could explain the rise in EPFO registration. First, earlier only employers who had more than 20 employees on their rolls were required to register under the EPFO. In 2016, this was changed to employers employing more than 10 employees. Since in India, most firms employ less than 20 employees, the numbers of those eligible for enrolment would have shot up. So, this is just a definitional shift from informal to formal employment and does not represent an increase in total employment.

The second factor is stated in the Union Budget 2018-19. The government has been encouraging enrolment in the Employee Provident Find since the last three years. It has offered concessions like, "Contribution of 8.33 per cent of Employee Provident Fund (EPF) for new employees by the Government for three years". It has also promised, "Contribution of 12 per cent of EPF for new employees for three years by the Government in sectors employing large number of people like textile, leather and footwear". Other concessions include, "additional deduction to the employers of 30 per cent of the wages paid for new employees under the Income Tax Act". These concessions have now been extended for another three years. Thus, it would be highly profitable to the firms to employ new employees and register them under EPF.

The organised sector is not hiring people directly. It has, increasingly, preferred to get labour on contract. It is likely that such contract labour from the unorganised sector is getting registered under the EPF due to the concessions offered by the government. Since the concessions are for new employees, it is possible that the older employees are being replaced by newer ones and being enrolled. If the older employees remain on the EPF rolls, then the number would just increase without new employment. Many analysts point to the lacunae in the EPF data. Ghosh and Ghosh do claim to have adjusted for them. But how successfully can this be done? It is claimed that those being counted are under 25; they are first timers at work. Most of the poor drop out of school before they reach Class 12 and start working. Only about 26 per cent of the relevant age group (18-25) are enrolled in higher education. Rest join the workforce, starting at the age of 15 — even earlier. Fifteen years back, about 22 million were added to the population and would now be potential job seekers. But, if those who go for higher education and 75 per cent of the women are removed from this number, the job seekers today would be about 12 million unskilled and another three million with higher degrees. Most of these 15 million are employed in the unorganised sector, though some work indirectly for the organised sector. They may now be getting counted under the new scheme.

The huge expansion of employment under Mudra Scheme claimed by the Niti Aayog vice-chairperson is unlikely given that the average size of the loan under this scheme is Rs 45,000. An average micro unit employs 1.7 persons with a capital of less than Rs 25 lakh. The loan may strengthen the capital base of the unit but would hardly generate any new jobs. The issue is not whether new employment is rapidly rising but where the vast majority of the residually-employed are being counted — in the formal or the informal sector. That requires a careful study.

http://indianexpress.com/article/opinion/columns/narendra-modi-govt-indian-economy-demonetisation-gst-job-loss-unemployment-5178184/

India never had a golden age

'Interview with Prof. D.N. Jha, historian. By ZIYA US SALAM

LONG before many historians called the Hindutva forces' bluff with respect to Indian history, Professor D.N. Jha had talked about the not-so-divine status of the cow in the Hindu religion. Basing his argument largely on scriptures, he came up with The Myth of the Holy Cow. Hindutva outfits panned the book but could not dispute the words of the holy texts he quoted. Jha stood his ground, and the cow began to be seen as a political rather than divine animal. "The bull rather than the cow deserved a divine status," he argued, saying that there have been temples dedicated to Nandi.

For the past few years, the soft-spoken academic has been waging another battle: safeguarding India's pluralist past. Be it raising his voice against atrocities inflicted on minorities and Dalits or exposing the shallowness of the Bharat Mata ki Jai slogan, Jha's arguments are rooted in history. He has argued that the way forward is not through a slogan like Bharat Mata ki Jai but Jai Hind, not through Brahmanical superiority but egalitarianism. He disagrees with any notion of a mythical golden age in Indian history, arguing that kings, whatever their religion, have always waged battles for political superiority.

In his latest book, Against the Grain, released recently, he continues his battle for writing history right.

Excerpts from an interview:

The Constitution says "India that is Bharat", yet there was no concept of Bharat as a cohesive nation for the longest time. How do you explain this anomaly? Also, with the given history, how honest is it to make a slogan like Bharat Mata ki Jai the benchmark of nationalism?

It is true that Bharata as a country evolved over a long time. It does not occur in the entire corpus of the Vedic texts, though the Bharat tribe is mentioned in some of them. The first mention of Bharata in the territorial sense is found in an inscription of the Kalinga king Kharavela (1st century BCE), but in later Sanskrit texts (which I have consulted) wherever it is mentioned, its geographical connotation remains, by and large, ambiguous. It is only in the late 19th century that Bharata came to denote the whole of India as we have it today. This coincided with the rise of Indian nationalism, but, curiously, it now appeared as a mother. The earlier Bharata morphed into Bharata Mata in a song of Dwijendra Lal Roy (1863-1913) and she figures as such prominently in several other late 19th century works, including Anand Math of Bankim Chandra Chattopadhyaya. This change of gender—Bharata becoming a Mata (mother)—may be a theme of the nationalist discourse among specialists, but it is strange that Queen Victoria was visualised as a guardian of Mother India. Equally curious is the depiction of India as Lady Hind holding the flag of the British Empire jointly with Britannica in cartoons published in the Hindi Punch as early as 1904. So a non-specialist may ask himself, what kind of nationalism was this? Historically, Bharata Mata is hardly a century and a quarter old; her contemporary, gau mata, is almost the same age. Recently, the Madhya Pradesh government created another Mata, Rashtramata, out of Malik Muhammad Jayasi's "Padmavati". So I am confused which of these Matas could become the benchmark of Indian nationalism. I would, therefore, prefer Jai Hind over Bharata Mata.

Prominent travellers to India, including Francois Bernier and Johann Gottfried von Herder, refer to mild-natured Hindus, those who assimilated what they could, made space for everyone. Yet we have Alberuni's distinctly different account. When exactly do we notice a change from Hindus being gentle people to those who considered foreigners impure or mlechha? If the tolerant tag is well deserved, how does one explain the Brahmanical hostility to Buddhism?

I would say that both views are largely correct. When Alberuni (973-1048) wrote about the intolerance, haughtiness and conceit of Hindus, conflict between Brahmanism and Shramanic religions (Buddhism and Jainism, especially the former) was at its peak; Buddhism was on the verge of being driven out of the country as appears from the sustained Brahmanical assault on Buddhist establishments.

In fact, Brahmanical intolerance of other religions is amply attested by our sources, and you are right in saying that Brahmins treated foreigners as mlecchas. It is possible that Alberuni may have made his statement against this background of antagonism between Brahmanical and non-Brahmanical religions.

But at the time when foreigners like Francois Bernier (1620-1688) and others wrote about India, the religious scenario was different: there was no religious rivalry between Brahmanism and Shramanism; Buddhism had almost disappeared from the country of its birth and had settled outside India; even the contradiction between Hinduism and Islam was not very sharp.

Also, one has to keep in mind that alongside the long history of sectarian conflict within Brahmanism and its antagonism towards other religions, there is, in India, an equally long history of the coexistence of religions, and of mutual borrowings among them. This syncretism is an important feature of India's religious history. And despite the much-trumpeted conflict between Hinduism and Islam, even these two religions borrowed much from each other. An example of mutual borrowing between the two religions that comes readily to mind is the identification of the cult of the Muslim Satya Pir with that of the Satyanarayan Puja, prevalent in Bengal and adjoining regions. So it is likely that Bernier and other foreigners took notice of this kind of long syncretic tradition of India and spoke of tolerant Hinduism.

In recent times, we have had the exclusive and exclusionist leanings of Dayananda Saraswati and Ramakrishna Paramahansa being readily accepted. Is that the way forward?

No, I don't think so. Dayananda Saraswati founded the Arya Samaj in 1875; the same year he wrote a book called Satyarth Prakash whose last two chapters are devoted entirely to the denunciation of Christianity and Islam. Nor are the teachings of Ramakrishna acceptable as a way forward. His ardent and most prominent disciple, Vivekananda (1863-1902), who founded the Ramakrishna Mission in 1897 for the promotion and propagation of Advaita Vedanta, spoke of religious tolerance but spewed venom against Islam as is indicated by the statement that "from Pacific to the Atlantic for five hundred years blood ran all over the world… that is Mohammadanism" (Shakespeare Club of Pasadena, California, February 3, 1900). Given these facts, the ideas of neither of the two "great" spiritual masters are acceptable. Moreover, as we are aware, their ideas are feeding into Hindutva which in everyday life these days means lynching of Muslims and Dalits, attacks on mosques and churches, horrendous crimes against women, etc.

The best way forward, therefore, is to leave the people to themselves. Every individual should be allowed to practise the religion of his choice without the direct or indirect interference of the state as guaranteed by our Constitution.

In the run-up to the Karnataka Assembly elections, we have had a unique case of the State government deciding to confer on Lingayats the status of a distinct religious community. How well founded in history is the claim or the decision?

I would not like to discuss the electoral politics of Karnataka; I leave that to political commentators. But so far as the Lingayats are concerned it is well known that their emergence as a major religious force in north-western Karnataka took place around the 12th century. Basavanna contributed greatly to their movement, which differed from orthodox Hinduism in many ways. It was anti-Brahmanical, anti-caste and anti-Vedic; its followers, both men and women, wear a linga (which they call ishtalinga) on their body and do not bother about the worship of an idol in a temple. Given this background of Lingayats, I feel there is some substance in recognising them as a separate religious community.

With the advancement of aggressive Hindutva, we have had a number of Dalits, and even leaders like Mayawati, threatening to convert to Buddhism. Is it not a reverse flow of events? I ask this because in history we have instances of the victorious king imposing his faith on the vanquished. Like the Pandian king of Madurai, a practitioner of Jain faith, being forced to convert to Saivism.

The legend of the Pandian king has been extensively written about and scholars have questioned its authenticity. But so far as the conversion of Dalits is concerned, I would to like to say that their mass conversion to Buddhism or even to Islam has been caused largely by the inequities of the Indian caste system, which is defended by Hindutva ideologues. In this context, it is worthwhile remembering the conversion of Babasaheb Ambedkar to Buddhism, in 1956, along with nearly half a million "untouchables".

In "Against the Grain", you refer to Hindutva ideologues who look at ancient India as some kind of a mythical golden age, a time when there was social harmony, economic prosperity, etc. How well founded is the claim?

During the freedom struggle, Indian historians indulged in an uncritical glorification of pre-Islamic India: the Indian state was described as a constitutional monarchy; tribal oligarchies were equated with Athenian democracy; the village assemblies (sabhas) in south India were portrayed as little democracies; the period of the Gupta rulers was treated as the golden age when the Indian people were happy and prosperous and lived in peace and harmony. This picture of ancient India supplied an ideological support to freedom fighters; but after India's Independence it served no such purpose though the Hindutva ideologues have clung on to these ideas, and, inspired by them, even our Prime Minister has made laughable statements about the Indian past on several occasions. But a scientific analysis of our sources amply proves that at no stage in history the common people of India witnessed a truly golden age. The history of India, like that of any other country, has been a story of social inequities, exploitation of the common people, religious conflict, and so on. The idea of a golden age has always been abused, in India as well as in other countries.

Even as the fight over the Babri Masjid goes on and on, we know that some Buddhist structures were not left untouched by revivalist Hindu kings. For instance, Hindu temples in Nalanda university. If so, is it true that our entire history has been a game of "might is right"?

What you describe as "might is right" may be true at one level. But that is also an oversimplification. It may not have been the king who always played a role in case of religious confrontation. The Babri Masjid was demolished with the connivance of the Indian state. In history, the adherents of one religion may have played a prominent role in attacking the religious establishments of other religions that they perceived as their rivals.

The reason for this may have been rooted in deeper historical processes and one can't argue that so and so king imposed his religion on others. For example, when we speak of the Brahmanical assault on Buddhism, it will have to be seen against the background of the doctrinal changes in Buddhism and Brahmanism, as well as in their changing social and material context, their social base and their source of patronage, etc.

http://www.frontline.in/arts-and-culture/literature/india-never-had-a-golden-age/article10108362.ece?homepage=true

***

VOICE OF BUDDHA

Publisher : Dr. UDIT RAJ (RAM RAJ), Chairman - Justice Publications, T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001, Tel: 23354841-42

● Year : 21 ● Issue 13 ● Fortnightly ● Bi-lingual ● Total Pages 8 ● 16 to 31 May , 2018

Why Rajkot lynching is no big surprise — in India, certain castes, not caste itself, get killed

Why Mukesh Sawji Vania was lynched? Because he was a Dalit. He was killed in Rajkot, Gujarat. There have been series of such gruesome incidents not only in Gujarat but in other parts as well. Till 1980s and 1990s there was a hope that caste will wither away with the pace of education and urbanization. If Africans were discriminated there is some reason to understand that the colour of Africans is different from rest of the world. In our case, we have been living on this land for thousand years. Why the caste feeling is so deep rooted? Caste is like an insurance company where without paying a premium certain privileges are reserved like marriage, progeny, social-cultural needs, security, socialization etc. It's survival is strongly backed by Theory of Karma.

Why the caste is not withering away? The main reason is that social-cultural revolutions has not happened here like in other countries for example Europe has seen reforms after reforms. Whenever Dalits are discriminated, buck is passed on to the Government and gets related to law and order. Then very conveniently the opposition shirks the responsibility to annihilate it and when the same party comes into power they too do not have any agenda to fight this menace. For vote bank, political leaders support to strengthen the caste system. We borrowed the governance system from Europe where the Democracy evolved but we faulted in the beginning not taking up the caste issue and blindly followed the welfare programs of those governments. The caste was never in the agenda of political parties to break it, rather they used it mercilessly for various gains. There is no hope in the future also to get it annihilated and now it has started transgressing the boundary of India also. There has been much of debate in Britain parliament to fight it. In many countries debates are going on that they have to make new legislation to fight the caste discrimination. There have been enough discourses at Human Right Commission in UN and even in US Senate. One can die or go out of India, caste will remain with. In a recent study in March, 2018 in the US it was reported that 52% Dalits and 27% backwards face caste discrimination. Soundararajan and Maari Zwick-Maitreyi, who co-authored the report, worked with various Ambedkarite organisations in the United States over eight months to create and disseminate the online survey. The report was released by American philosopher Dr. Cornel West, one of the first people to teach B.R. Ambedkar's work at Harvard University 20 years ago.

Having been subjugated by foreigners for millennia and still we have not realized that how much harm has been done to this country. India has seen defeat after defeat in the hands of foreigners not on the account of their strength and weaponries but due to internal social segregation. Each caste was made to be conscious of it's occupation no matter who is ruling them. Reasons for defeat have been conveniently undermined and at different time and space, reasons differ for debacles that some time horses and elephants betrayed, and on other time rival Kings and Feudals joined hands with invaders, poor weapons were also causes and back stabbing and tracery were common factor. Supposing all these reasons were present but how could handful foreigners stay and rule for long if the common masses did not cooperate with them or they remained neutral. So called lower caste comprising 85% of population were rather happy under the foreign regime as they had been discriminated by our own people. So much of losses the nation has suffered due to caste system. A study is needed to be conducted that how much litigations in the courts are locked up due to caste rivalry and it may be around 50%. There is a huge wastage of resources and governance on account of caste system. And so called upper caste feel inferior to mingle their sweat and labour in production. The best of the talents from entire population are not pooled in excelling the various fields like education, research, innovation and sports etc. Those who worked in tanneries and iron etc were never given importance as technicians or technocrats as a result no advancement was done in subjects like metallurgy, civil and mechanical engineering etc. Had these people been given dignity they would have developed subjects and technology in their own fields and India would not have borrowed from outside.

The caste does not seem to die soon. In a developed state like Gujarat an experience of Deepak Patel from Ahmedabad reinforces that it will stay. He is a Dalit but writes surname Patel. When he tried to buy a flat in Neelkanth society, Shahi Baagh, Ahmedabad, it was denied when his identity as a Dalit was revealed. Deepak Patel again tried to buy house in Mahavir hills, Gandhi Nagar, Gujarat, again he met the same fate as before. The day the real patriotic feeling in India like in other societies dawns, caste will start to break. Mainly lower castes try to break it but those who rule the root in all fields, do not seem serious to annihilate it. When people have such strong attachment for the caste, then the national interest becomes secondary.

***

Publisher, Printer and Editor - Dr. UDIT RAJ (FORMERLY KNOWN AS RAM RAJ), on behalf of Justice Publications, T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001, Tel: 23354841-42, Telefax:23354843, Printed at Sanjay Printing Works, WZ-4A, Basai Road, New Delhi.
Website : www.aiparisangh.com, www.uditraj.com E-mail: parisangh1997@gmail.com Computer typesetting by Ganesh Yerekar